अथ तनादयः।

तनु विस्तारे 1

व्याख्याः तनु (फैलाना)। उभयपदी, उदित जिसका फल – है निष्ठा में इट् का निषेध।

तनादिकृभ्य उः ३.१.७६

शपोपवादः। तनोति, तनुते। ततान, तेन; तनितासि, तनितासे। तनिष्यति, तनिष्यते। तनोतु, तनुताम्। अतनोत्, अतनुत। तनुयात्, तन्वीत। तन्यात्, तनिषीष्ट। अतानीत्, अतनीत्।

व्याख्याः तनादीति– तन् आदि और कृ धातु से उ प्रत्यय हो

शप इति– यह शप् का अपवाद है।

तनोति– लट् प्रथमपुरुष एकवचन में 'तन् + ति' इस दशा में 'तनादिकृम्य उः' इस सूत्र से उ विकरण हुआ। उसको पित् तिप् परे रहते सार्वधातुक गुण होने पर रूप सिद्ध हुआ।

तुनते– लट् आत्मनेपद प्रथम पुरुष एकवचन में त के अपित् सार्वधातुक होन से ङिद्वत् हो जाने के कारण उ प्रत्यय को गुण नहीं हुआ।

शेष रूप– परस्मैद–तनोति, तनुतः तन्वन्ति। तनोषि, तनुथः, तनुथ। तनोमि, तनुवः, तनुमः। आत्मनेपद–तनुते, तन्वाते, तन्वते। तनुषे, तन्वाथे, तनुध्वे। तन्वे, तनुवहे, तनुमहे।

ततान– लिट् परस्मैपद प्रथमपुरुष एकवचन में द्वित्व, अभ्यास–कार्य और उपधावद्धि होकर रूप सिद्ध हुआ।

शेष रूप– तेनतुः, तेनुः। तेनिथ, तेनथुः, तेन। ततन, तेनिव, तेनिम। कित् लिट् में 'अत एक हल्मध्ये–' इस सूत्र से एत्व और अभ्यास का लोप हुआ।

तेने– लिट् आत्मनेपद प्रथमपुरुष एकवचन में त के अपितु सार्वधातुक होन से ङिद्वत् हो जाने के कारण एत्व और अभ्यास का लोप हुआ।

शेष रूप– तेनाते, तेनिरे। तेनिषे, तेनाथे, तेनिध्वे। तेने, तेनिवहे, तेनिमहे।

तनादिभ्यस्तथासोः 2.4.79

तनादेः सिचो वा लुक् स्यात् त-थासोः। अतत, अतनिष्ट। अतथाः, अतनिष्टाः। अतनिष्यत्, अतनिष्यत।

व्याख्याः तन् आदि से पर सिच् का विकल्प से लोप होता है त और थास् परे रहते।

अतत – लुङ् आत्मनेपद प्रथमपुरूष एकवचन में 'तनादिभ्यः–' सूत्र से सिच् का लोप हाने पर 'अनुदात्तोपदेश–' इस सूत्र से नकार का लोप होकर रूप बना। जहाँ सिच् का लोप नहीं हुआ, वहाँ उसे इट् होकर 'अतनिष्ट' रूप बना।

अतथाः, अतनिष्ठाः–लुङ् आत्मनेपद प्रथमपुरूष एकवचन थास् में सिच् लोप होकर अनुनासिक लोप होने पर पहला रूप बना और सिच् के लोप के अभाव में दूसरा रूप।

षेणु दाने ।।२।। सनोति, सुनते

व्याख्याः सन् (दान देना) – सेट्। उभयपदी। आदि ष् को स्। लट् लकार में परस्मैपद् में उ को गुण होकर सनोति रूप बना। आत्मनेपद में सनुते।

ये विभाषा 6.4.43

जन-सन-खनामात्वं वा यादौ किति। सायात्, सन्यात्। असानात्

व्याख्याः जन्, सन् और खन् धातुओं को आत्व विकल्प से हो यकारादि कित् प्रत्यय परे रहते।

अलोन्त्य–परिभाषा के अनुसार आकार अन्त्य नकार को होता है।

सायात्, सन्यात्। आ.लि. परस्मैपद प्रथमपुरूष एकवचन में यासुट् के कित् होने में 'ये विभाषा' सूत्र से नकार को विकल्प से आकार होकर उक्त दो रूप बने।

असानीत्, असनीत्–लुङ् परस्मै० प्र० १ में 'अतो हलादेर्लघोः' सूत्र से वैकल्पिक वद्धि होने से दो रूप बने।

जन-सन-खनां सञ्झलोः 6.4.42

एषामाकारोन्तादेशः स्यात् सनि झलादौ क्ङिति। असात असनिष्ट। असाथाः, असनिष्ठाः।

व्याख्याः जन्, सन् और खन् धातुओं को आकार अन्तादेश हो सन् और झलादि कित् ङित् प्रत्यय परे रहते।

असात, असनिष्ट–लुङ् आत्मनेपद प्रथमपुरूष एकवचन में 'तनादिभ्यस्तथासोः' सूत्र से सिच् का विकल्प से लोप हुआ। लोप पक्ष में झलादि ङित् प्रत्यय त के परे होने के कारण 'जनसन–' सूत्र से नकार को आकार होकर पहला रूप बना। लोप के अभाव में सिच् को इट् आगम हुआ, तब झलादि न होने से आत्व नहीं हुआ। इस प्रकार दूसरा रूप सिद्ध हुआ।

असाथाः, असनिष्ठाः–लुङ् थास् में पूर्ववत् सिच्–लोपपक्ष में आत्व हुआ और अभावपक्ष में सिच् को इट्

शेष रूप–असनिषाताम्, असनिषत। असनिषाथाम्, असनिढ्वम्। असनिषि, असनिष्वहि, असनिष्महि।

क्षणु हिंसायाम् 2

क्षणोति, क्षणुते। ह्ययन्तेति न वद्धिः- अक्षणीत् अक्षत, अक्षणिष्ट। अक्षथाः, अक्षणिष्ठाः।

व्याख्याः सेट्। उदित्। उभयपदी।

ह्ययन्तेति–लुङ् में 'वदव्रज–' से प्राप्त हलन्तलक्षणा वद्धि का 'नेटि' सूत्र से निषेध हुआ। पुनः 'अतो हलादेर्लघोः' से वैकल्पिक वद्धि प्राप्त हुई। उसका 'ह्ययन्तक्षण–' इत्यादि सूत्र से निषेध हो गया।

अक्षणीत्–पूर्वोक्त प्रकार से रूप की सिद्धि होती है।

अक्षत–लुङ् आत्मनेपद प्रथमपुरूष एकवचन में 'तनादिभ्यस्तथासोः' सूत्र से सिच् का लोप होने पर 'अनुदात्तोपदेश–' इत्यादि सूत्र से अनुनासिक णकार का भी लोप हो गया।

अक्षथाः–लुङ् मध्यमपुरूष एकवचन थास् में 'अक्षत' के समान कार्य हुए।

क्षिणु च 4

उप्रत्यये लघूपधस्य गुणो वा-क्षेणोति। क्षिणोति। क्षेणिता। अक्षेणीत्, अक्षित, अक्षेणिष्ट।

व्याख्याः सेट्। उदित्। उभयपदी।

उ प्रत्यये इति–उ प्रत्यय परे रहते लघूपध गुण विकल्प से होता है।

तात्पर्य यह है कि एक परिभाषा है 'संज्ञापूर्वको विधिरनित्यः' अर्थात् जिस विधि में संज्ञा निमित्त हो वह अनित्य होती है।

'पुगन्तलघूपधस्य च' यह विधि भी उपधासंज्ञा–निमित्तक होने से संज्ञा–पूर्वक है। अतः अनित्य होने से गुण नहीं होता। परन्तु संज्ञापूर्वक विधि की अनित्यता भाष्य में नहीं कहीं गई, इसलिये भाष्यकार के मत से उक्त लघूपध गुण हो जाता है। इस प्रकार लघूपध गुण विकल्प से होता है।

उ–प्रत्यय–निमित्तक लघूपध गुण जब हुआ तब 'क्षेणोति' और जब गुण न हुआ तब 'क्षिणोति' रूप बना।

तणु अदने 5

तर्णोति, तणोति। तर्णुते, तणुते।

व्याख्याः सेट्। उदित्। उभयपदी।

तर्णोति, तणोति–जब भाष्यकार के मत से लघूपध गुण हुआ तब पहला रूप बना और जब संज्ञापूर्वक विधि के अनित्य होने से गुण नहीं हुआ तब दूसरा रूप बना।

डुकृा् करणे 6

करोति।

व्याआख्याः डुकृञ् (करना) – अनिट्, ञित् उभयपदीं डित्। ड्वित् होने से 'ड्वितः क्त्रिः ३।३।८८' इस सूत्र से 'क्त्रि' प्रत्यय होकर 'कत्रिमम्' रूप बनता है।

करोति–लट् प्रथमपुरूष एकवचन में उ–प्रत्यय–निमित्तक गुण ऋकार को अर् और उ प्रत्यय को तिप्–निमित्तक ओ गुण होकर रूप बना।

अत उत् सार्वधातुके 6. 4. 110

उप्रत्ययान्तकञेकारस्य उत् स्यात् सार्वधातुके क्ङिति। कुरुतः।

व्याख्याः उ–प्रत्ययान्त कञ् धातु के अकार को उकार होता है सार्वधातुक कित् ङित् प्रत्यय परे रहते।

कुरुतः–लट् प्र० पु० द्विवचन में ऋकार को उ–प्रत्यय–निमित्तक गुण अर् हुआ। तब 'कर् उ तस्' इस दशा में अपित् सार्वधातुक होने से ङिद्वत् होने के कारण 'अत उत्–' इत्यादि सूत्र से अकार को उकार होकर रूप सिद्ध हो गया।

तस् के ङिद्वत् होने से उ प्रत्यय को गुण नहीं हुआ।

न भ-कुर्छुराम् 8. 2. 79

भस्य कुर्छुरोरुपधाया न दीर्घः। कुर्वन्ति।

व्याख्याः भ–संज्ञक तथा कुर् और छुर् की उपधा को दीर्घ नहीं होता।

कुर्वन्ति–लट् प्र० पु० बहु० में 'क+अन्ति' इस दशा में विकरण उ प्रत्यय हुआ। तब ऋकार को गुण अर् हुआ। इसके बाद 'अत उत्–' सूत्र से अकार को उकार आदेश हुआ। 'हलि च' सूत्र से उकार को दीर्घ प्राप्त हुआ।

उसका 'न भकुर्–' सूत्र से निषेध हो गया।

म० पु०–करोषि, कुरूथः, कुरूथ। उ० पु०–करोमि।

नित्यं करोतेः 6. 4108

करोतेः प्रत्ययोकारस्य नित्यं लोपो म्वोः परयोः। कुर्वः। कुर्मः। कुरूते। चकार, चक्र। कर्ता। करिष्यति, करिष्यते। करोतु। कुरूताम्।

व्याख्याः क धातु से पर प्रत्यय उकार का नित्य लोप हो मकार और वकार परे रहते।

कुर्वः, कुर्मः–लट् उ० पु० द्वि बहु० वस् और मस् में उ–प्रत्यय–निमित्तक गुण और अकार को 'अत उत्–' से उकार होने पर 'नित्यं करोतेः' से उ प्रत्यय का लोप हुआ।

लट् आ० प०–कुरुते, कुर्वाते, कुर्वते। कुरुषे, कुर्वार्थे, कुरुध्वे। कुर्वे।

कुर्वहे, कुर्महे। लिट् परस्मै० चकार, चक्रतुः, चक्रुः। चकर्थ, चक्रथुः, चक्र। चकार, चकव, चकम। आ० प० चक्रे, चक्राते, चक्रिरे।

करिष्यति, करिष्यते–लट् में 'ऋद्धनोः स्ये' सूत्र से वलादि आर्धधातुक 'स्य' को इट् आगम हुआ।

लोट्–करोतु–कुरूतात्, कुरूताम्, अकुर्वन्। लङ्–अकरोत् 'अकुरुतांम्' अकुर्वन् अकरोः, अकुरूतम्, अकुरूत। अकरवम, अकुर्व, अकुर्म। आ० प०–अकुरूत, अकुर्वाताम्, अकुर्वत। अकुरूथाः, अकुर्वाथाम्, अकुरूध्वम्। अकुर्वि, अकुर्वहि, अकुर्महि।

ये च 6. 4. 109

कञ उलोपो यादौ प्रत्यये परे। कुर्यात्। कुर्वीत। क्रियात्, कषीष्ट। अकार्षीत्, अकत। अकरिष्यत्, अकरिष्यत।

व्याख्याः कञ् से पर उ प्रत्यय का लोप हो यकारादि प्रत्यय परे रहते।

कुर्यात्–वि० लि० परस्मै० प्र० ए. व. में विकरण उ–प्रत्यय–निमित्तक गुण अर् ऋकार को हुआ और अकार को 'अत उत्–' सूत्र से उकार, तब यकारादि प्रत्यय यास् परे होने के कारण 'उ', प्रत्यय का 'ये च' सूत्र से लोप होकर रूप बना।

यहाँ भी 'हलि च' सूत्र से प्राप्त दीर्घ का 'न भ–कुर्–छुराम्' सूत्र से निषेध होता है।

शेष रूप–कुर्याताम्, कुर्युः। कुर्याः, कुर्यातम्, कुर्यात। कुर्याम्, कुर्याव, कुर्याम। आ० प०–कुर्वीत, कुर्वीयाताम्, कुंर्वीरन्। कुर्वीथाः, कुर्वीयाथाम्, कुर्वीध्वम्। कुर्वीय, कुर्वीवहि, कुर्वीमहि।

क्रियात्–आ० लि० परस्मै० प्र० पु० १ में 'रिङ् श–यग्–लिङ्क्षु' सूत्र से ऋकार को रिङ होकर रूप सिद्ध हुआ।

कषीष्ट –आ० लि० आ० प० प्र० पु० ए व में 'उश्च' सूत्र से 'सीयुट्' के कित होने से ऋकार को गुण नहीं हुआ।

अकार्षीत्–लुङ् परस्मै० प्र० पु० ए. व. में अट्, च्लि, सिच्, तिप् के इकार का लोप, और उसे ईट् आगम 'सिचि वद्धिः परस्मैपदेषु' से ऋकार को आर् वद्धि, सकार को मूर्धन्य षकार होकर रूप बना।

शेष रूप–अकार्ष्टाम्, अकार्षुः। अकार्षीः, अकार्ष्टम्। अकार्ष्ट। अकार्षम्, अकार्ष्व, अकार्ष्म।

अकत–लुङ् आ० प० प्र० एकवचन में 'ह्रस्वादङ्गात्' सूत्र से सिच् का लोप होकर रूप बना।

शेष रूप–अकषाताम्, अकषत। अकथाः, अकषाथाम्, अकध्वम्। अकषि, अकष्वहि, अकष्महि।

सम्परिभ्यां करोतौ भूषणे 6. 1. 137

समवाये च 6.1.138

सम्परिपूर्वभ्य करोतेः सुट् स्याद् भूषणे संघाते चार्थे।

संस्करोति = अलंकरोतीत्यर्थः। संस्कुर्वन्ति = संघीभवन्तीत्यर्थः।

सम्पूर्वस्य क्वचिद् अभूषणेपि सुट् –"संस्कत भक्षाः" इति ज्ञापकात्।

व्याख्याः सम् और परि उपसर्गपूर्वक क धातु को सुट् आगम हो भूषण–सजाना और समूह अर्थ में।

संस्करोति (सजाता है)–यहाँ 'सजाना' अर्थ होने के कारण सम्पूर्वक क धातु को सुट् आगम हुआ।

संस्कर्वन्ति (इकट्ठे होते हैं)–यहाँ संघ अर्थ होने के कारण सम्पूर्वक क धातु को सुट् आगम हुआ।

सम्पूर्वभ्येत–सम्पूर्वक क धातु को कहीं सजाने से भिन्न अर्थ में भी सुट् आगम होता है, 'संस्कतं भक्षाः ४।२।१६।।' इस ज्ञापक से। उपर्युक्त ज्ञापक में सजाना अर्थ नहीं, संस्कार करना अर्थ है, पर सुट् किया गया है। इसलिये 'अन्नं संस्करोति' में भी सुट् हो जाता है।

उपात्प्रतियत्न-वैकत-वाक्याध्याहारेषु च 6. 1. 139

उपात् कञः सुट् स्यादेष्वर्थेषु चात् प्रागुक्तयोरर्थयोः।

प्रतियत्नो = गुणाधानम्। विकतमेव वैकतम् = विकारः। वाक्याध्याहारः = आकाङ्क्षितैकदेशपूरणम्। उपस्कता कन्या। उपस्कता ब्राह्माणाः। एधोदकस्योपस्कुरूते।

उपस्कतं भुङ्क्ते। उपस्कतं ब्रूते।

व्याख्याः उप उपसर्ग से पर कञ् को सुट् आगम हो प्रतियत्न, विकार और वाक्याध्याहार अर्थों में भी।

चाद् इति–चकार (भी) कहने से पहले कहे गये 'सजाना' और 'इकट्ठा होना' अर्थ में भी उप से पर कञ् को सुट् से आगम होता है।

ऊपर ये अर्थ कहे गये हैं–१ प्रतियत्न–गुण–रंग ग्रहण करना। २ वैकत–विकार। ३ वाक्याध्याहार–वाक्य में जिसकी आकाङ्क्षा हो उस एक देश को पूरा करना।

उपस्कता कन्या (कन्या सजाई)–यहाँ सजाना अर्थ होने से उप से पर क को सुट् आगम हुआ।

उपस्कता ब्राह्माणाः (ब्राह्मण इकट्ठे हुए)–यहाँ संघ अर्थ होने से उप से पर क को सुट् आगम हुआ।

एधो दकस्योपस्कुरूते (लकड़ी जल में रङ्ग पैदा करती है)–यहाँ गुण का प्रधान अर्थ होने से उप से पर क का सुट् आगम हुआ।

उपस्कतं भुङक्ते (विकत चीज को खाता है)–यहाँ विकार अर्थ होने से उप से पर क को सुट् आगम हुआ।

उपस्कतं ब्रूते (वाक्य का अध्याहार करते हुए बोलता है)–यहाँ वाक्याध्याहार अर्थ होने से उप से पर 'क' को सुट् हुआ।

वनु याचने 7

वनुते। ववने।

व्याख्याः सेट्। उदित्। आत्मनेपदी।

ववने–लिट् प्र० पु० ए० व० में द्वित्व और अभ्यासकार्य हुआ। 'अत एकहलमध्येनादेशादेर्लिटि' सूत्र से प्राप्त एत्व, अभ्यासलोप का 'न शसददवादिगुणानाम्' से निषेध हो गया।

मनु अवबोधने 8

मनुते। मेने। मनिता। मनिष्यते। मनुताम्। अमनुत। मन्वीत। मनिषीष्ट। अमनिष्ट। अमत। अमनिष्यत।। इति तनादयः।।

व्याख्याः सेट्। उदित्। आत्मनेपदी।

लट्–मनुते, मन्वाते, मन्वते। मनुषे, मन्वाथे, मनुध्वे। मन्वे, मन्वहे, मन्महे।

अमत–लुङ् प्र० पु० एकवचन में 'तनादिभ्यस्तथासोः' से सिच् का लोप होने पर 'अनुदात्तोपदेश–' सूत्र से अनुनासिक नकार को लोप होकर रूप बना। सिच् के लोप के अभाव में सिच् को इट् होकर 'अमनिष्ट' रूप बना।